आखर हिंदी पत्रिका ; e-ISSN-2583-0597 खंड 3/अंक 4/सितंबर 2023
Received: 10/09/2023; Accepted: 14/09/2023; Published: 24/09/2023

अनामिका की कविताओं में बनते चरित्रों के घरौंदे...

- **केसरबेन राजपुरोहित**
अतिथि व्याख्याता, हिंदी विभाग
कन्नूर विश्वविद्यालय
मों. 9207433926
ई मेल- kesarclt@gmail.com

केसरबेन राजपुरोहित, **अनामिका की कविताओं में बनते चरित्रों के घरौंदे...**, आखर हिंदी पत्रिका, खंड 3/अंक 4/सितंबर 2023,(419-423)

समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श को एक नए दृष्टिकोण से विकसित करने की प्रभावशाली भूमिका निभाने में अनामिका का नाम सिद्धहस्त है। अनामिका के नज़रिए से आज नारी विमर्श को पुनर्भाषित करने की ज़रुरत महसूस होती है। नारी ही नहीं वास्तविक जीवन से जुड़े कई चरित्र अनामिका की कल्पना में स्थाई रूप धारण करते हैं। उनमें वे पात्र भी शामिल हैं जिन्हें कभी न्याय नहीं मिला, जिन्हें कभी कोई मान-सम्मान नहीं दिया गया, जो हमेशा गलतफहमियों के शिकार होते रहे। ऐसे चरित्रों के भीतर बसे अकेलेपन को अनामिका अपनी अनुभूतियों के द्वारा शब्दबद्ध करती है।

सदियों से नारी के मान-सम्मान को लेकर कई टीका-टिप्पणियाँ होती रही हैं। कभी उसे स्वर्ग की सीढ़ी माना जाता है, तो कभी नरक का द्वार भी कहा गया है। एक फटे हुए कागज की तरह स्त्री को पढ़ा जाता है। जो लिफाफे बनाने के काम आता है या उसकी नाव बनाकर बच्चें उससे खेलते हैं। दिवार पर लटकी घड़ी की तरह उसे अपने काम से सिर नहीं उठाना। अर्थात् अपने हक या अधिकार को भूलकर सिर्फ कर्तव्य निर्वाह करते रहना ही सबसे बड़ा नारी धर्म है। फिल्म के गानों की तरह मनबहलाव के लिए उसे सुना जाता है। अपने हक की बात करें तो रवैया होगा जैसे कोई बड़ा अपराध कर दिया है। अनामिका कहती हैं-

"भोगा गया हमको/ बहुत दूर के रिश्तेदारों के/ दु:ख की तरह!"[1]

बेटियों के जन्म पर कोई खुशी नहीं मनाई जाती। हर कदम पर उन्हें नज़अंदाज किया जाता हैं। भूलकर भी कोई गलती हो जाए तो 'दुश्चरित्र' का ताज उन्हीं के सिर पर। मायके में 'परायाधन' कहा जाता है। ससुराल में उसकी पहचान पति के नाम से ही होती है। फलाने की पत्नी या बहू। तभी अनामिका कहती है-

"लड़कियाँ हवा, धूप, मिट्टी होती हैं/ उनका कोई घर नहीं होता!"[2]

बिना किसी जगह के वैसे ही 'बेजगह' है नारी। फिर क्यों कहा जाता है कि औरत अपनी जगह से गिरकर कहीं की नहीं रहती? जिसकी कोई जगह ही नहीं वह गिरेगी कहाँ से? उसकी तुलना नाखून और बालों से की जाती है। दोनों गिरने के बाद किसी काम के नहीं। उनका महत्व खत्म हो जाता हैं। कहने का अभिप्राय है कि स्त्री से कोई गलती हो जाए तो उसका कोई समाधान हो ही नहीं सकता पुरुषवादी समाज की विचारधारा के अनुसार। उसे भी वस्तु की श्रेणी में ही खड़ा कर दिया जाता है। तभी अनामिका कहती है- "जन्म के समय लड़कियों का विशेष स्वागत भले ही न तब होता था और न अब होता है, पर विकास के क्रम में लड़कियाँ हमेशा से पिता-माता, भाई, पितामह, चाचा, मामा सबकी चहेती हो जाती रही हैं। पूरी परंपरा जिनके खिलाफ़ खड़ी हो, उन्हें किसी का चहेता बनने के लिए पूरा आत्मिक तेज लगाना पड़ता है और विशिष्ट रूप से अच्छा भी होना पड़ता है- यह तो स्पष्ट है!"[3]

अनामिका की कविता में ही कुछ ऐसे चरित्र भी है जो गलतफहमियों के शिकार हैं। जिन्हें सुना ही नहीं जाता। ऐसे किरदार स्वयं ही हार स्वाकारने के लिए मजबूर हो जाते हैं। प्रतियोगी परीक्षा के परीक्षार्थी को संबोधित कर अनामिका कहती है कि असफलता का पहला स्वाद कडवा ज़रूर होता है। लेकिन वही से सफलता की शुरुआत भी होती है। कली से फूल बनने की व्यथा का अनुभव फूल ही जानता है। उसके दर्द की आवाज़ किसी को सुनाई नहीं देती। कितने श्रम और कौशल के बाद उसकी एक-एक पंखुडी खुली होगी इसकी ओर किसीका ध्यान नहीं जाता। लोग खिले हुए फूल की खूब सराहना करते हैं। के. जी. उण्णिकृष्णन कहते है "पराजय से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं। पराजय विजय की तरफ का एक पुल है।"[4]

हर व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व है, विशेषताऐं है, फिर क्यों किसी के साथ किसी की तुलना? भविष्य की चिंता व्यक्ति को इस तरह से घेरती है कि वर्तमान को भी खाक कर देती है। गीता में फल की उम्मीद छोड़ कर कर्म पर ध्यान केंद्रित करने का संदेश दिया गया है। क्योंकि फल के प्रति आसक्ति से कर्मबद्धता में कमी आ जाती है। अनामिका कहती है-

"ये मत पूछो कल क्या होगा, जो भी होगा, अच्छा होगा!"[5]

एक जीत या हार से किसीका भाग्य निश्चित नहीं हो जाता। पूर्ण विराम नहीं लग जाता। हर अंत की एक शुरुआत होती है। रास्ते कभी रुकते नहीं। मंजिल को पाने के लिए राही को कदम बढ़ाने ही पड़ते हैं। 'सत्रह बरस का प्रतियोगी परीक्षार्थी' शीर्षक कविता में अनामिका कहती है-

"कुछ होने से कुछ नहीं होता,/कुछ खोने से कुछ नहीं खोता!
पूर्ण विराम कल्पना है,/निष्काम होने की कामना/भी आखिर तो कामना है!
सिलसिले टूटते नहीं, रास्ते छोड़ते नहीं।"[6]

यथार्थ को स्वाकार न करना ही दु:ख का कारण है। अनामिका के अनुसार उम्मीद जीवन में अमृत के समान है। खुशियों की उम्मीद, कुछ पाने की उम्मीद, कुछ कर गुजरने की उम्मीद ही तो हौसला बढ़ाती है। समाज ने जिसे तड़ीपार कर दिया वह हारा नहीं है। मुरझाने के बाद ही फूल की खुशबू अधिक मादक हो जाती है। खंडहरों में ही अशरणों को भी शरण मिलती है। चाहे पशु-पक्षी, जीव-जंतु या थका-हारा मनुष्य। अर्थात् जीवन अनुभवों से ही परिपूर्ण होता है। उसकी महक और भी बढ़ जाती है। अनामिका कहती है कि "जीवन में दो-चार निर्णय गलत भी लेने चाहिए। वे अक्सर किसी बड़े प्रयोजन का द्वार सिद्ध होते हैं।"[7]

मन में थोड़ी सी भी उम्मीद है तो जीत तो निश्चित है जिस तरह "सौंदर्यशास्त्र का एक नियम है गजब-सा- जो थोड़ा भी सुंदर है, सबसे सुंदर है"[8]

आधुनिक समय में नारी की देह शोभा-व्यापार बन गई है। लड़कियाँ मॉडलिंग करने आती है। हँसते हुए चहरे के साथ रैंप वॉक करती दिखाई देती है। उस हँसी के पीछे की उदासी कोई नहीं जानता। न ही कोई जानना चाहता है। सपने लेकर आई होगी। अब दिखावे की ज़िंदगी। देह जैसे हैंगर पर लटकी हुई हो। अनामिका कहती है कि "हँसी नये जमाने का धूँधट है- अपने दुख छुपाए रखने का साधन।"[9]

जीवन में संघर्षों का सामना करते समय अकेलापन महसूस करने की आवश्यकता नहीं। कभी बच्चा थककर माँ से होमवर्क करने के लिए कहता है। माँ को भी समझ में नहीं आता कि 'रिक्त स्थानों की पूर्ति' क्या है? आखिर में वह बेटे को समझाती है कि खाली जगह ही विशाल आसमान बनाती है। हिम्मत रखकर शुरुआत करें तो सब संभव हो सकता है। बिना कोशिश के हार तो निश्चित ही है। अनामिका के शब्दों में-

"हम सबका खालीपन/धीरे-धीरे मिट्टी से उठकर/बन जाता है नीला आसमान!"[10]

छल-कपट, धोखाधड़ी आम बातें बन गई हैं। कुछ कहने की कोशिश करें तो उतर मिलता है आज के समय में इतना तो करना ही पड़ता है। इसमें कौन सी बड़ी बात है। सभी करते हैं। किसी के साथ गलत करते हुए यह ख्याल कभी नहीं आता कि वह लौटकर आपके पास ही आएगा। 'धोखा' शीर्षक कविता में अनामिका कहती है-

" कल्पना की जीभ का भला क्या मुकाबला!
भूखे ही ऐंठ रहे लोगों को भी/ खाने को मिल जाता है धोखा"[11]

एक बाल मजदूर जो अगरबतियाँ बेचकर अपना गुजारा करता है। जब-तब लेखिका से टकरा जाता है। एक दिन उसे फ्लाईओवर के नीचे खाना खाते हुए देख लेखिका के पूछने पर वह बताता है कि वह 'ईरानी पुलाव' खा रहा है। जो रोज सुबह होटल के पिछवाड़े मिलता है। जिसे खाकर पेट में दर्द होता है। लेकिन जब पेट भरा हुआ होता है तो दर्द से फर्क नहीं पड़ता। इसके समाधान के लिए वह तीस बार गोल-गोल दौड़ता है और

थकान से सो जाता है। कितना हृदयविदारक चित्र है यह। बाल मजदूरी अभिशाप है। यह सभी मानते हैं और जानते भी है। लेकिन समाज में असमानता का ऐसा वातावरण है कि उसका कोई हल सौ प्रतिशत संभव नहीं हुआ है। शिक्षा से ही सारी समस्याओं का हल संभव है लेकिन आज वर्तमान जगत में जो हालात है महादेवी वर्मा कहती है कि "शिक्षा हमें एक दूसरे के निकट लाने वाला सेतु न बनकर विभाजित करने वाली खाई बन गई है, जिसे हमारी स्वार्थपरता प्रतिदिन विस्तृत से विस्तृततर करती जा रही है। हम उसे पाकर केवल मनुष्य नहीं, किंतु ऐसे विशिष्ट मनुष्य बनने का स्वप्न देखने लगते हैं जिनके निकट आने में साधारण मनुष्य भीत होने लगे।"[12]

अनामिका कहती है-

"किसी को जानना/ एक बड़ी उत्तप्त-सी छलाँग है

किसी को जानना/ तालाब, दरिया, समुंदर और बारिश हो जाना है!"[13]

आज का व्यक्ति व्यस्त है। अपने में ही मस्त है। आसपास के लोगों की बात ही क्या जब अपने परिवार के लोगों की समस्याओं से भी वह अवगत नहीं। चेहरे पर हंसी है। गहरे में कई चिंताओं का बवंडर है। अपने मन की समस्या किसी के साथ सांझा करना भी संभव नहीं। व्यक्ति की संवेदनाएँ बदल रही हैं। डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी ने सही कहा है कि "वर्तमान में जीवन की जटिलताओं ने संवेदनाओं को जटिल और भोथरा किया है।"[14]

निष्कर्ष:

अनामिका की अनुभूति मात्र स्त्रियों तक ही सीमित नहीं है। अपनी कविताओं में उन चरित्रों को भी उभारा है जिन्हें समाज ने भी दरतरफ कर दिया है। चाहे किसी प्रतियोगी परीक्षा का छात्र हो, बाल मजदूर जिसे चकमक पत्थर कहती है, मॉडलिंग करनेवाली लड़की हो, अंधाधून दौड में भागतें मनुष्य, अकेलेपन के शिकार व्यक्ति सभी के चित्रों को उभारा है अनामिका ने। वृद्धाओं को घर का नमक कहती है कवयित्री। क्योंकि नमक के बिना हर चीज बेस्वाद है। उनका घर में होना भी सारे स्वाद होने जैसा है। समस्याऐं तो अनेक है। उनके समाधान की बातें भी की जाती है। लेकिन आवश्यकता है उन पर अमल करने की। शिक्षित होने का अर्थ सिर्फ किताबें पढ़ना ही नहीं है। समाज में व्याप्त दुराचारों का विरोध कर, बदलाव लाने की पहल ही शिक्षा है। तभी तो महादेवी वर्मा कहती है "शिक्षा एक ऐसा कर्तव्य नहीं है जो किसी पुस्तक को प्रथम पृष्ठ से अंतिम पृष्ठ तक पढ़ा देने से ही पूर्ण हो जाता हो, वरन् वह ऐसा कर्तव्य है जिसकी परिधि सारे जीवन को घेरे हुए हैं और पुस्तकें ऐसे साँचे हैं जिनमें ढालकर उसे सुडौल बनाया जा सकता है।"[15]

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 9
2. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 11
3. अनामिका, स्त्री-विमर्श का लोकपक्ष, वाणी प्रकाशन, 2012, पृ. सं. 215

4. के. जी. उण्णिकृष्णन, अंधेरा और उजाला (एकांका संकलन), इंडियन सोसाइटी ऑफ ओथेर्स, 2022, पृ. सं. 46
5. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 28
6. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 25-26
7. अनामिका, स्त्री-विमर्श का लोकपक्ष, वाणी प्रकाशन, 2012, पृ. सं. 184
8. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 59
9. अनामिका, स्त्री-विमर्श का लोकपक्ष, वाणी प्रकाशन, 2012, पृ. सं. 47
10. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 123
11. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 53
12. महादेवी वर्मा ,श्रृंखला की कड़िया, लोकभारती प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 96
13. अनामिका, कवि ने कहा (चुनी हुई कविताएं), किताबघर प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 33
14. डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी, वाणी प्रकाशन, 2016, पृ. सं. 47
15. महादेवी वर्मा ,श्रृंखला की कड़िया, लोकभारती प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 99

****